"काया"

• काहे रे बन खोजन जाई । सरब निवासी - सदा अलेपा- तोही संगि समाई ।

अर्थः- हे भाई ! परमात्मा को ढूँढने के लिए जंगलों में क्यों जाता है ? परमात्मा सब में बसने वाला है, फिर भी सदा माया के प्रभाव से निर्लिप रहता है । वह परमात्मा तेरे साथ बसता है ।

पुहप मधि जिउ बास बसत है मुकर माहि जैसे छाई । तैसे ही हरि बसे निरंतर घट ही खोजहु भाई ।

अर्थः- हे भाई ! जैसे फूल में सुगंधि बसती है, जैसे शीशे में शीशा देखने वाले का अक्स बसता है, वैसे ही परमात्मा एक रस सबके अंदर बसता है । इस वास्ते उसको अपने हृदय में ही तलाश ।

बाहर भीतर एको जानहु इहु गुर गिआन बताई । जन नानक बिन आपा चीने मिटै न भ्रम की काई । (9-684)

अर्थः- हे भाई ! गुरु का आत्मिक जीवन का उपदेश ये बताता है कि अपने शरीर के अंदर और अपने शरीर से बाहर हर जगह एक परमात्मा को बसता समझो । हे दास नानक ! अपना आत्मिक जीवन परखे बिना मन पर पड़ा हुआ भटकना का जाला दूर नहीं हो सकता और, तब तक सर्व - व्यापक परमात्मा की सूझ नहीं आ सकती ।

- तुमरे गुण किआ कहा मेरे सतिगुरा जब गुर बोलहे तब बिसम होइ जाइ । हम जैसे अपराधी अवर कोई राखै जैसे हम सतिगुर राखि लीए छडाइ । तूं गुर पिता तूं है गुर माता तूं गुर बंधप मेरा सखा सखाइ ।

अर्थः- हे मेरे सतगुरु ! मैं तेरे कौन - कौन से गुण बयान करूँ ? जब मैं 'गुरु - गुरु' जपता हूँ, मेरी हालत आश्चर्यजनक अवस्था वाली बन जाती है । हम जैसे पापियों को जैसे सतगुरु ने रख लिया है बचा लिया है विकारों के पँजे से छुड़ा लिया है । और कौन इस तरह बचा सकता है ? हे हरि ! तू ही मेरा गुरु है, मेरा पिता है, मेरा रिश्तेदार है, मेरा मित्र है ।

जो हमरी बिधि होती मेरे सतिगुरा सा बिधि तुम हरि जाणहु आपे । हम रुलते फिरते कोई बात न पूछता गुर सतिगुर संगि

कीरे हम थापे । धन धन गुरु नानक जन केरा जित मिलिऐ चूके सभि सोग संतापे । (4-167)

अर्थः- हे मेरे सतगुरु ! हे मेरे हरि ! जो मेरी हालत होती थी, उस हालत को तू खुद ही जानता है । मै यहाँ - वहाँ भटकता फिरता था, मेरी कोई बात नहीं था पूछता, तूने मुझ कीड़े को गुरु सतगुरु के चरणों में ला के आदर बख्शा । हे भाई ! दास नानक का गुरु धन्य है । धन्य है जिस गुरु को मिल के मेरे सारे शोक समाप्त हो गए मेरे सारे कष्ट दूर हो गए ।

- जहँ आपा तहँ आपदा जहँ संसा तहँ सोग । कहे कबीर थेह किउं मिटे चारों दीरहा रोग । (कबीर)

अर्थः- यह दोहा अहंकार और संदेह के नकारात्मक प्रभावों को दर्शाता है । "आपा" का अर्थ है अहंकार या घमंड, और "आपदा" का अर्थ है मुसीबत या विपत्ति । जब कोई व्यक्ति अहंकारी होता है, तो वह दूसरों की बातों को सुनने या समझने को तैयार नहीं होता, जिससे वह गलतफहमियों और झगड़ों में फंस जाता है । "संशय" का अर्थ है संदेह या शक । जब किसी बात पर संदेह होता है, तो वह व्यक्ति हमेशा चिंतित और परेशान रहता है । इससे उसका मन अशांत रहता है और वह किसी भी काम में ठीक से ध्यान नहीं लगा पाता । कबीरदास जी कहते हैं कि इन दोनों स्थितियों से बचने के लिए धैर्य और समझदारी की आवश्यकता है ।

लेने को सतनाम है देने को अन्न दान (मतदान) । तरने को है दीनता डूबन को अभिमान ।

अर्थः- लेने के लिए हरि या प्रभु का नाम सर्वोत्तम है । देने के लिए अन्न भोजन का दान सर्वश्रेष्ठ है । तरने के लिए या भव सागर से पार होने के लिए स्वयं को ईश्वर या गुरु के अधीन कर देना उसकी मर्जी, कृपा

पर छोड़ देना, अथवा सम्पूर्ण रूप से समर्पित हो जाना ही सर्वश्रेष्ठ उपाय है । तथा डूबने नष्ट होने के लिए अभिमान करना ही सबसे बड़ा कारण है । यानि अभिमानी का सिर सदैव नीचा होता है ।

कंचन तजना सहज है सहज तिरिया का नेह । मान बड़ाई ईर्ष्या दुर्लभ तजनी यह । (तुलसीदास)

अर्थः- जब तक तुम्हारे मन में किसी के भी प्रति ईर्ष्या भाव है ,तुम आत्मश्लाघा आत्म प्रशंसा से ग्रस्त हो सब जगह मान चाहते हो सब जगह मी फस्ट भाव लिए हो तुम्हारा अहंकार शिखर छू रहा है तब तक तुम्हें ईश्वर के दर्शन नहीं होंगें । इन्हें तजना सहज नहीं है । स्वर्ण के प्रति मोह और नारी के प्रति आसक्ति एक बार व्यक्ति त्याग सकता है लेकिन बड़े - बड़े ऋषि मुनि भी मान - सम्मान, बड़ाई और ईर्ष्या से ऊपर नहीं उठ सके हैं ये तीनों हमें हमारे असली स्वरूप ब्रह्मण से दूर रखते हैं जबकि ब्रह्म (सेल्फ) तो सदैव ही आनंद स्वरूप है, सनातन चेतना है ,सनातन अस्तित्व है । फिर अपने ज्ञान का इस नश्वर शरीर का गुमान कैसा ? कैसा मान और कैसा अपमान ? शरीर का न मान होता है न अपमान शरीर तो ख़ाक हो जाता है । फिर भी हमें कोई अप्रिय बोल देता है तो हम बरसों अकड़े रहते हैं । ये तन आखिर ख़ाक बनेगा क्यों मगरूर गरूरी में ?

कबीर माइआ तजी त किआ भइआ जउ मान तजिआ नही जाइ । मान मुनी मुनिवर गले मान सभै कउ खाइ ।

अर्थः- हे कबीर ! 'ऊच भवन कनकामनी' आदि माया त्याग दी तो भी कुछ नहीं सँवारता, अगर अहंकार नहीं त्यागा जाता बड़े - बड़े ऋषि - मुनि त्याग के इस मान - अहंकार में गल जाते हैं, ये अहंकार किसी का लिहाज नहीं करता अहंकार हरेक को खा जाता है जो भी प्राणी अहंकार करता है उसका आत्मिक जीवन खत्म हो जाता है ।

काला मुख करे मान का आदर लाये आग । मान बड़ाई छोड कर रहे नाम से लाग ।

अर्थः- सांसारिक मान - सम्मान को त्याग कर, उसे आग के हवाले कर देना चाहिए । इसका अर्थ यह है कि सांसारिक मोह - माया और दिखावे से दूर रहकर, सच्चे ज्ञान और शब्द गुरू केवल रागमई सुगधित प्रकाशित आवाज़ विशेष की भक्ति की ओर ध्यान देना चाहिए ।

(पाठी माँ साहिबा)

हक हक हक

(शब्द गुरु प्रत्यक्षता)

ऐक शब्द

उपरोक्त अर्थों में कहे गये गुरू-सतगुरू-शबद-नाम-सच्चा नाम इत्यादि विशेष - विशेषो का केवल और केवल ऐक ही अर्थ विशेष है कि – "रागमई प्रकाशित सुगधित आवाज़ विशेष" । इसके आलावा सारे अर्थ केवल मनमत हैं - गुरूमत का इससे कोई संबंध विशेष नहीं हैं ।

"सबद गुरू - सुरत धुन चेला । गुण गोबिंद - नाम धुन बाणी ।"